eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

भारत विभाजन और स्त्रियों की खामोश आवाजें

डॉ0 प्रार्थना सिंह[1]

[1]असिस्टेंट प्रोफेसर (इतिहास) फ0अ0अ0 राजकीय महाविद्यालय, महमूदाबाद, सीतापुर उ0प्र0

Received: 24 Oct 2024 Accepted & Reviewed: 25 Oct 2024, Published : 31 Dec 2024

Abstract

15 अगस्त 1947 को भारत को आज़ादी मिली किंतु इसकी कीमत भारत विभाजन के रूप में चुकानी पड़ी। हम विभाजन को किस प्रकार ग्रहण करते हैं? विभाजन बहुत ही अल्पकालीन समय में स्वीकार किया गया था। आम लोग, जो हिन्दू, मुस्लिम, सिख साथ मिलकर भारत के स्वतंत्रता की लड़ाई लड़े थे, उनकी मनःस्थिति इस विभाजन को समझ पाने की नहीं थी। अपनी जड़ों से उजड़े जाने का दर्द, अपनी पहचान, अपनी भौतिक सम्पत्ति छीन जाने का आक्रोश शीघ्र ही दूसरे सम्प्रदाय के प्रति वैमनस्व में बदल गया। बड़े पैमाने पर दंगे भड़के। लाखों लोग सीमा पार कर नये देश के वाशिंदे बने। लाशों से लदी रेलगाड़ी, लिंग आधारित हिंसा की शिकार महिलाऐं, जलते घर और असुरक्षित शरणार्थी शिविर उस समय के आम दृश्य बन गए थे।

इन तमाम भयावहता के बीच महिलाओं ने दर्द की दोहरी यातनाओं से गुज़रीं। उजड़े जाने और परिवारों से बिछड़ जाने का साथ ही वह शक्ति प्रदर्शन का औजार बनी। स्त्रियों के ऊपर हुई हिंसा और बाद के समय में मानसिक निवर्सन और विध्वंस की स्मृति के कैसे जुझती रहीं, यह इस शोधपत्र के अध्ययन का विषय है। नये दस्तावेज, संस्मरण, साहित्य के साथ ही मौखिक इतिहास (विभाजन से प्रभावित लोगो का साक्षात्कार जो मुख्यतः उर्वशी बुटालिया द्वारा किया गया) मुख्य शोध प्रविधि रहेगी। यह अध्ययन इतिहास, समाजशास्त्र, नृजातीयता और लैंगिक अध्ययन पर आधारित अर्तरअनुशासनिक (Interdisciplinary) है। यह अध्ययन विभाजन को सामूहिक सांस्कृतिक क्षति बोध के रूप में देखता है। इस अध्ययन का उद्देश्य विभाजन के दौरान हुई हिंसा की शिकार स्त्रियों की व्यक्तिगत कहानी, स्मृति को सहेजना है ताकि इस आघात, सामाजिक दबाव और शर्म से जो चुप्पी व्याप्त है, उसे तोड़ा जा सके और हिंसा के मानवीय, कालव्यापी और देशव्यापी प्रभाव को देख सकें तथा आने वाली पीढ़ियों के लिए एक इतिहास का सबक तैयार कर सके।

कीवर्ड– आज़ादी का अमृत महोत्सव, विभाजन, विरासत, स्त्रियों का अस्तित्व, पिंजर, लाशों से भरी रेलगाड़ियाँ।

Introduction

ये दाग़ दाग़ उजाला, ये शब गज़ीदा सहर
वो इंतिजार था जिसका, ये वो सहर तो नहीं,
ये वो सहर तो नहीं जिस की आरजू लेकर
चले थे यार कि मिल जाएगी कहीं न कहीं
फ़लक के दश्त में तारों की आखिरी मंज़िल

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

फ़ैज की यह नज़्म सुबहे आज़ादी 15 अगस्त 1947 की बात करती है, कि वह आज़ादी तो नहीं जिसके लिये भारतवाशी लड़े थे, और टुकड़ों टुकड़ों में बंट कर आज़ादी पाई। जब सरहदों के आर–पार जनसंख्या का विस्थापन शुरू तो समूचा उपमहाद्वीप साम्प्रदायिक उन्माद और हिंसा के नये दौर में प्रवेश कर गया। हिन्दू–सिख और मुसलमान एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए। अनगिनत महिलाओं का बलात्कार हुआ और अनगिनत अपहत कर ली गईं। तत्कालीन समय में बहुत कम लोग स्वतन्त्रता और विभाजन को समझ पाये थे कि वास्तव में यह क्या है तथा इसके परिणाम क्या होंगे? अंग्रेजो ने 'बांटो और शासन करो' की नीति के तहत भारत में धार्मिक उन्माद को बढ़ावा दिया। दूसरी तरफ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जिसे इस नीति से लड़ना था उसने तुष्टीकरण की नीति अपनाकर मुस्लिम रूचि (interest) को हवा दी भले ही वह अपने उद्देश्य में धर्मनिरपेक्ष थी। 1940 में 'पाकिस्तान प्रस्ताव' द्वारा मुस्लिम लीग ने हिन्दू और मुसलमान दो अलग राष्ट्र का सिद्धान्त दिया। इसके बाद भारत ने एक अलग राजनीति और धर्मनीति का सामना किया। साम्प्रदायिक हिंसा बढ़ती जा रही थी। 16 अगस्त 1946 में कलकत्ता में सुहरावर्दी सरकार द्वारा पाकिस्तान की प्राप्ति के लिए 'प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस' का आह्वान कर जनता को धर्मसेना में बदल दिया। अनुमान है, अगस्त 1946 में कलकत्ता में हुए इस नरसंहार में करीब 4000 लोग मारे गए और 1 लाख लोग बेघर हो गए। 3 जून 1947 की घोषणा ने राजनेताओं को यह स्पष्ट कर दिया कि अगस्त से पहले उन्हें अलग–अलग राष्ट्रों के निर्माण पर सहमत होना ही पड़ेगा। इसका कोई विकल्प नहीं है। ब्रिटिश बैरिस्टर सिरल रेडक्लिफ को सीमा आयोग का प्रमुख बनाया गया जो कभी भारत आया भी नहीं था। उसने बाद में स्वीकार किया कि पुराने नक्शों और जनगणना सामग्री पर भरोसा किया तथा मेज पर नक्शा बिछाकर भारत और पाकिस्तान के बीच लाइन खींचकर दरार बना दी।

धार्मिक और राजनीतिक आधार पर हुआ यह विभाजन बहुत ही अल्पकालीन समय का परिणाम था। जनता की मनःस्थिति इसे समझ पाने की भी नहीं थी। इसकी अत्यंत तीव्र प्रतिक्रिया हिंसा के रूप में हुई क्योंकि आम लोग अपनी धार्मिक और जातीय पहचान से बहुत गहराई से जुड़े थे। लोग सदियों से अपने क्षेत्र विशेष के वाशिंदे थे, अपनी जड़ों से उखाड़े जाने का दर्द, अपनी पहचान, अपनी भौतिक सम्पत्ति, अपनों से नाता टूटने का डर लोगों के अंदर इस कदर घर कर गया कि लोग खुद को बचाने के प्रयास में दूसरे सम्प्रदाय के सफाये को भी तर्कसंगत मानने लगे, धीरे–धीरे यही सच बन गया। पलायन की बड़ी लहर ने बड़े पैमाने पर दंगे भड़काये। लगभग 80 लाख गैर मुस्लिम पाकिस्तान से भारत आयेतथा 75 लाख के करीब मुस्लिम भारत से पाकिस्तान (पूर्वी और पश्चिमी) गए। अनुमानों के अनुसार मरने वालों की संख्या 10 से 20 लाख के करीब है नियोजन में कमी, ब्रिटिश जल्दबाजी, प्रशासनिक असहयोग और राजनेताओं के सत्तालोलुपता ने विभाजन की भयावहता को विकराल कर दिया। लाशों से लदी रेलगाड़ियाँ, लिंग आधारित हिंसा की शिकार महिलाऐं, जलते घर और बारिशों के मौसम में तंग, भीगते, असुरक्षित शरणार्थी शिविर उस समय के आम दृश्य थे।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

आज जब भारत अपनी स्वतंत्रता की हीरक जयंती मना चुका है, तब हमारे सामने यह प्रश्न उठता है कि बतौर इतिहास के अध्येता हम विभाजन को किस प्रकार ग्रहण करते हैं? क्या आजादी के उल्लास में विभाजन का स्याह सच धूमिल हो जाता है? यह सच है कि विभाजन के दौरान हुई हिंसा ही हमारी स्मृति में अंकित है, इससे हुए देशव्यापी, कालव्यापी प्रभाव को उस प्रमुखता से महत्ता नहीं दी गई। इस विभाजन का उस समय की आधी आबादी पर क्या प्रभाव पड़ा? जब अपनी जड़ो से उखड़े लोग, परिवार और गांव ही सामाजिक और मानसिक निर्वासन की स्थिति में था तो शक्ति प्रदर्शन का औजार बनी स्त्रियों की क्या ही बिसात थी। पुरूषों के बरक्स स्त्रियों की स्थिति और भयावह थी। वह शारीरिक और मानसिक यातनाओं के दौर से गुजरीं। बाद में, आने वाले समय में हिंसा, विध्वंस और निर्वासन के दर्द को कैसे महिलाओं ने झेला और इस दर्दनाक मंजर से अपनी स्मृति में जूझती रहीं, ये अध्ययन का विषय है।

विभाजन के दौरान महिलाओं के साथ सर्वाधिक हिंसा हुई। धर्म के आधार पर दो देशों को बांटने वाली लकीर स्त्रियों के देह से ही गुजरती है। दुनिया की कोई भी संस्कृति अपने में पूर्ण नहीं होती और धर्म संस्कृति का अभिन्न अंग है किन्तु धर्म का सर्वाधिक अधार्मिक और अमानवीय पक्ष यह है कि यह अन्य के खिलाफ घृणा, हिंसा, नरसंहार, स्त्रियों को अपमानित करने में गौरव, शक्तिशाली और आनन्दित महसूस करता है। महिलाओं के साथ हुई हिंसा सिर्फ धार्मिक उन्माद को नहीं बताती बल्कि यह समाज के, धर्म के पितृसत्तात्मक रवैये को बताती है। कमला भसीन, रितु मेनन और उर्वशी बुटालिया प्रमुख शोधकर्ता रही जिन्होंने विभाजन के दौरान महिलाओं के साथ हुई हिंसा, बलात्कार और उससे उत्पन्न हुए आघात और मानसिक निर्वासन पर काम किया और बताया कि आधिकारिक तौर पर पाकिस्तान जाते समय 50,000 महिलाओं का तथा भारत आते समय 33,000 महिलाओं का अपहरण हुआ। यह सरकारी आंकड़ों के अनुसार संख्या है जबकि वास्तविक आंकड़ों के अनुसार संख्या है निश्चय ही इससे अधिक होगी। महिलाओं का अस्तित्व किसी भौतिक पहचान (material identity) से नहीं जुड़ा था। स्त्री स्वयं भूमि, घर, धन के समान सम्पत्ति का एक प्रकार थी। पितृसत्तात्मक समाज में किसी स्त्री का अपहरण, बलात्कार, हत्या या उसे पददलित करना कहीं न कहीं उस समुदाय के पुरूषों की पराजय का प्रतीक था।

महिलाओं के साथ हुई हिंसा का दूसरा पहलू अपने ही परिजनों द्वारा की गई हिंसा थी। ज्यादातर मामलों में इसे हिंसा माना भी नहीं जाता। अपने परिजनों द्वारा की गई हिंसा महिलाओं को इज्जत और मान–सम्मान से जोड़कर देखने के कारण हुई या आत्महत्या को उकसाया गया। इन महिलाओं को शहीद के तौर पर याद किया जाता है। मार्च 1947, रावलपिंडी दंगो की शुरूआत होने पर थोहा खालसा गांव की सिख–हिन्दू औरतों ने दंगाइयों से इज्जत बचाने के लिए संत गुलाब सिंह की हवेली में बने कुंए में छलांग लगा दी थी। इसका बड़ा ही मार्मिक चित्रण गोंविद निहलाणी निर्देशित टेलीफिल्म 'तमस' में किया गया जो भीष्म साहनी के इसी नाम के उपन्यास पर आधारित है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

महिलाओं को विभिन्न स्तर पर हिंसा का सामना करना पड़ा। अपहरण और बलात्कार के अलावा उनका यौन उत्पीड़न भी किया गया। जननांगो को विकृत करना, सामूहिक तथा सार्वजनिक बलात्कार साथ ही जिंदा जला देने की अनगिनत कहानियां हैं। महिलाओं के स्तनों पर धार्मिक नारे चिह्न अंकित करना और अपहत महिलाओं को यौनकर्मी तथा घरेलू दास बना दिया जाना, उन्हें एक निरंतर अपमानजनक स्थिति में रखना था। इतने बड़े स्तर पर यौन उत्पीड़न किसी व्यक्तिगत प्रतिशोध या यौन मनोरोग का कारण नहीं था बल्कि यह स्त्रियों की पितृसत्तात्मक समाज में अस्तित्व को दिखाता है कि स्त्रियां भी भौतिक सम्पत्ति और भूमि की भांति सम्पत्ति का एक प्रकार थीं। उनकी कोई अलग पहचान नहीं थी। एक समुदाय की स्त्री का अपमानदूसरे समुदाय की विजय और अहम की तुष्टि थी। यह विरोधी समजा को मनोवैज्ञानिक रूप से तोड़ने के लिए किया गया। उर्वशी बुटालिया अपनी पुस्तक द अदर साइड ऑफ साइलेंसः वायसेस फ्राम द पार्टीशन ऑफ इण्डिया में कहती है कि थोहा खालसा गांव की स्त्रियों की शहादत को याद कर आज भी समुदाय हर वर्ष तेरह मार्च को शहादत दिवस मनाता है। इस गांव के विस्थापित लोग उन स्त्रियों को याद नहीं करते जो मरना नहीं चाहती थीं और मजबूरन उन्हें मरना पड़ा।

स्त्रियों की समस्या इतनी बड़ी थी कि जल्दी ही भारत और पाकिस्तान दोनों की सरकारों को एक सेंट्रल रिकवरी ऑपरेशन 6 दिसम्बर 1949 को करना पड़ा जिसका उद्देश्य ऐसी औरतों की घर वापसी थी जो विभाजन के दौरान अपने देश और परिवार से बिछड़ गई थी या अपरहत् कर ली गई थीं। यह ऑपरेशन यह मान कर चलाया गया कि स्त्रियों को जबरदस्ती ही घरों में बैठाया गया और उन्हें उनके मूल परिवार तक पहुंचाया जाना चाहिए। स्त्रियों के लिए लिया गया यह निर्णय भी पितृसत्तात्मक समाज की संरचना का एक प्रकार था। इसमें किसी भी मामले में उन स्त्रियों की राय जानने की कोई जरूरत नहीं समझी गई तथा इस ऑपरेशन का क्रियांवयन मानवीय भावनाओं और संवेदनाओं के परे मशीनी तरीके से किया गया। बंटवारे के दौरान बहुत सी ऐसी भी स्त्रियां थीं जो अपने परिवार से बिछड़ गईं थी जिन्हें दूसरे समुदाय के परिवार ने अपना लिया था। अब वह एक नए पारिवारिक सम्बन्धों एवं जीवन का हिस्सा बन चुकी थीं। रिकवरी ऐक्ट 1949 ने बिना उनसे पूछे पुनः उन्हें उनके परिवार से जुदा कर अपने–अपने देश भेज दिया।

इसके अतिरिक्त अपहत् स्त्रियों का जो अन्य धर्म के परिवार में रह कर आयीं थीं, कई परिवारों में उनका स्वागत नहीं हुआ। उन स्त्रियों की तो और बुरी स्थिति थी जिनके पास अपहरणकर्ता का बच्चा था या गर्भवती थीं, उन्हें नहीं अपनाया गया या उनके बच्चें को उनसे जुदा कर दिया गया। स्त्रियों को इसलिए अस्वीकार किया गया क्योंकि स्त्रियों की पवित्रता को परिवार की इज्जत से जोड़ा जाता है। समुदाय की इज्जत को बनाये रखने के लिए ऐसी स्त्रियों को नहीं स्वीकार किया गया क्योंकि रिश्तों के रक्षक पुरूष हैं, यदि कोई समुदाय अपनी स्त्रियों के रक्षा नहीं कर पा रहा है तो वह कमजोर है। उर्वशी बुटालिया अपनी पुस्तक में एक और घटना बताती हैं कि गुरूदासपुर बार्डर पर मंगल सिंह

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

अपने दो भाईयों के साथ मिलकर गुरूद्वारा में शांति प्रार्थना कर अपने परिवार के 18 सदस्यों को मार देता है।

ऐसी अनगिनत घटनाऐं हैं जिनका जिक्र भी इतिहास के पन्नों में नहीं है। विभाजन जिसे मुख्यतः राजनीतिक–क्षेत्रीय विभाजन के रूप में जानते हैं किन्तु यह ऐतिहासिक घटना विभाजन से प्रभावित लोगों के लिए आघात है, एक सामूहिक आघात जो अंतर–पीढ़ीगत रूप में संचारित हो रहा है, भारत और पाकिस्तान, दोनों ने भारत विभाजन के बारे में बात नहीं की। दिल्ली के पुराना किला में शरणार्थी लाखों की संख्या में रूके लेकिन उस इतिहास के दर्द को याद करने वाली कोई पट्टिका नहीं है। फरीदाबाद जैसा शहर तो शरणार्थियों को रखने के लिए बसाया गया था, में भी कोई स्मृति पट्टिका विभाजन को याद नहीं करती। विभाजन के ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय आयामों को चिकित्सा दृष्टि से देखा जाना चाहिए कि समाज आघातों का सामना कैसे करता है और कैसे संभालता है और क्या मनोवैज्ञानिक परिणाम हुए। विभाजन ने आम लोगों की तुलना में विभाजन से प्रभावित लोगों की सोच, दृष्टिकोण और व्यक्तित्व को आकार प्रदान किया। विशेष तौर पर महिलाएं मनोवैज्ञानिक चुनौती का सामना कर रहीं थीं। महिलाऐं अपने परिवार, मातृभूमि और धर्म को खोने के साथ ही विकलांग और अपमानित भी थीं। किसी अन्य धर्म द्वारा दूषित महिला अपने समुदाय से भी बहिष्कृत रह जाती थी। रिकवरी ऐक्ट के मशीनी और अमानवीय तरीके ने स्त्रियों की स्थिति और दूभर बना दी। बरामद स्त्रियों के पैतृक परिवारों द्वारा उन्हें अस्वीकार कर दिया गया क्योंकि इस परिवार के लिए वह अपवित्र थी। इन स्त्रियों के पास कोई विकल्प नहीं था और अंततः उन्हें शरणार्थी शिविरों में रहना पड़ा था। बिना चिकित्सा, भोजन और पानी की सुविधा के शरणार्थी शिविरों में रहना एक दर्दनाक संघर्ष था। कई बार गर्भवती महिलाओं को गर्भपात कराने तथा अपने बच्चों को छोड़ने को मजबूर किया जाता था। इन स्त्रियों के बच्चे को वैध नहीं माना जाता था। कई बार मां की बिना सहमति के बच्चे को गोद दे दिया जाता था। इन बच्चों का मजदूर के रूप में प्रयोग किया जाता था। इसके परिणामतः हजारों बच्चे अपनी मां से बिछड़ गए। स्त्रियों ने निरंतर बिछड़ने का दर्द झेला। उन्हें एक बार नहीं दो बार उजड़ना पड़ा।विभाजन के आघात ने स्त्रियों को मानसिक एवं भावनात्क स्तर पर गहरा दर्द दिया। फ्लैशबैक के द्वारा वह बार–बार उसी दर्दनाक घटना को बार–बार जीती थीं। इससे वह आघातपरांत तनाव विकार (PTSD-Post traumatic stress disorder) का शिकार हुईं। वह स्वयं और दुनिया से अलगाव महसूस कीं। कई बार यह आत्म क्षति के रूप में दिखता है। साझा आघात समुदाय के सामूहिक मानस को नुकसान पहुँचाता है। मैम्ब्रोल (2018) कहते हैं, "इस दृष्टिकोण से आघात की अंतर–ऐतिहासिक (transhistorical) क्षमता का अर्थ है कि ऐतिहासिक अतीत में एक सांस्कृतिक समूह का दर्दनाक अनुभव समकालीन व्यक्ति के मानसिक परिदृश्य का हिस्सा हो सकता है जो उसी सांस्कृतिक समूह से सम्बन्धित है।"

स्त्रियां नए परिवार और सम्बन्धों में अपनी नई पहचान के लिए निरंतर संघर्ष करती रहीं। नया धर्म, नए रीति रिवाज ने उन्हें खुद से ही निरंतर संघर्ष कराया। कई बार स्त्रियां स्टाकहोम सिंड्रोम

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

का शिकार होकर नए जीवन की ओर बढ़ी। किन्तु इन स्त्रियों का जीवन भी आसान नहीं था। 'फ्लैशबैक मेमोरी' से पीड़ित स्त्रियों के सामाजिक समर्थन की भी कमी थी। वह अपनी नई पहचान और समाज के साथ निरन्तर संघर्ष की स्थिति में थीं। सामाजिक पुनर्वास की स्थिति में शिक्षा और स्वास्थ्य के साथ ही आर्थिक असुरक्षा का संकट भी था। धार्मिक रूपांतरण और सामाजिक कलंक के साथ ही वह पहचान के संकट से भी गुजर रही थीं।

यह समय इतिहास में सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का था। सामूहिक एवं सांस्कृतिक आघात सिफ व्यक्तियों को ही नहीं बल्कि पूरे समुदाय और समाज को प्रभावित करता है। सरकारी प्रयासों की सीमाऐं थी। न तो भारत में ना ही पाकिस्तान में सरकारों द्वारा इस आघात और त्रासदी से निपटने का कोई व्यवस्थित संस्थागत प्रयास किया गया। सरकारों के लिए विभाजन का दृष्टिकोण मात्र राजनीतिक था जबकि आघात का स्वरूप सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक था। साहित्य ने इस विभाजन की व्यापकता और निर्वासन के स्थायित्व को स्वीकारा। वास्तव में साहित्य एक 'काउंटर इतिहास'– प्रस्तुत करता है जो इतिहास की पुर्नरचना करता है। साहित्य द्वारा विभाजन को 'सामूहिक सांस्कृति क्षति' के रूप में स्वीकारा। चाहे वह सआदत हसन मंटो (स्याह हाशिए, टोबाटेक सिंह खोल दो) हों, यशपाल, भीष्म साहनी (तमस), राही मासूम रज़ा, अमृता प्रीतम या जोगिन्दर पाल (स्लीपवॉकर्स) हो या खुशवंत सिंह हों, सभी ने विभाजन की अपनी रचना शक्ति का केन्द्र बनाया तथा विभाजन को ऐतिहासिक को पूरी मानवीयता से सामाजिक, वैयक्तित्व एवं मनोवैज्ञानिक संदर्भों में प्रस्तुत किया। यह दुःख हिंसा और धार्मिक उन्माद से जूझते लोगों को याद करके नहीं था बल्कि उस साझी संस्कृति की विरासत खत्म हो जाने का था। भारतीय उपमहाद्वीप की संस्कृति के तथाकथित राष्ट्रनिर्माताओं द्वारा सदियों से साथ जीते आ रहे लोगों को सिर्फ लोगों से ही दूर नहीं किया बल्कि मंटो के टोवाटेक सिंह की भांति अपने वतन से तथा स्वयं से भी निर्वासित कर दिया।

विभाजन का सामाजिक इतिहास मुख्यतः मौखिक है, चश्मदीद गवाह यानि स्मृतियां, किसी भी ऐतिहासिक प्रविधि के नियमानुसार नहीं चलती है। स्मृतियाँ चाहे हिंसा और विध्वंस की हो क्यों ना हों किन्तु इन स्मृतियों पर हर उस समुदाय का, हर उस व्यक्ति का अधिकार है जिसने उस समय को जीया है तथा हर वह पीढ़ी जो उससे प्रभावित हुई। विभाजन क्यों हुआ या इसके लिए कौन जिम्मेदार हैं, इसकी तुलना में इसके मानवीय प्रभावों को इतिहास का हिस्सा बनायें। विभाजन को पुनः समझना और सार्वजनिक बहस का हिस्सा बनाकर इतिहास की पुर्नव्याख्या की जा सकती है तथा नये दृष्टिकोण से देखने का प्रयास करना होगा जिससे औपचारिक इतिहास लेखन में उपेक्षित और दबा दी गई आवाजों और अनुभवों को सामने लाया जा सके। कमला भसीन, रितु मेनन और उर्वशी बुटालिया जैसे लोग इतिहास में भूला दिए गए लोगों की आवाज़ बनने का प्रयास करती है।

इस दौरान महिलाओं का शरीर राज्रू का मामला माना गया ना कि स्त्री का अपना मामला समझा गया। यह उत्तरोत्तर आधुनिक होते समाज के लिए एक संदेश है। इतिहास के इस दौर को विरासत

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

वर्तमान में सीख लें, इसमें ही विभाजन की स्मृति की सार्थकता है हर व्यक्ति और समुदाय के प्रति स्वीकार का भाव, सहिष्णुता और मानवीय गरिमा का सम्मान होना चाहिए।

संदर्भ सूची–

1. गुलजार, पिंजर हिन्दी फिल्म, 2003
2. ज्ञानेन्द्र पाण्डे, रिमेम्बरिंग पार्टीशन, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2001, आई0एस0बी0एन0 9780521807593
3. फ़ैज अहमद फ़ैज, सुबह–ए–आजादी, नुस्खा है वफा, अगस्त 1947, www.rekhta.org
4. www.nationalarchives.gov.uk.calcuttariots
5. Project Dastaan.org
6. On her shoulder-Noida Murad documentary.
7. सआदत हसन मंटो, खोल दो, rekhta.org/stories/khol-do-saadat-hasan-manto-stories?long= hi
8. उर्वशी, बुटालिया, द अदर साइड ऑफ साइलेंस पेंशन बुक्स ISBN 978014027171345
9. गोविंद निहलाणी, तमस टेलीफिल्म, 1988
10. now partion of british india scarred milliosn for life, spatniknews.in
11. https://pubmed.ncbi.nlm.nih.gov>international trauma in the context of 1947 India-Pakistan